[2014] 1 उम. नि. प. 224

फैकल्टी एसोसिएशन आफ एम्स

बनाम

भारत संघ और अन्य

18 जुलाई, 2013

मुख्य न्यायमूर्ति अल्तमस कबीर, न्यायमूर्ति सुरिन्दर सिंह निज्जर, न्यायमूर्ति रंजन गोगोई, न्यायमूर्ति एम. वाई इकबाल और न्यायमूर्ति विक्रमजीत सेन

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 15(4), 16(4), 16(1), 14 और 335 – आरक्षण – अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान में सुपर-स्पेशियल्टी पदों पर आरक्षण – सहायक आचार्य और उससे ऊपर वाले पदों पर प्रवेश परीक्षा के पश्चात् आरक्षण नीति अपनाना – इंदिरा साहनी वाले निर्णय में नौ न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा व्यक्त मत को दोहराते हुए आयुर्विज्ञान, इंजीनियरी और अन्य तकनीकी पदों के लिए सुपर-स्पेशियल्टी प्रक्रम पर योग्यता के संबंध में कोई समझौता नहीं किया जा सकता है इसलिए ऐसे पदों पर आरक्षण नीति अंगीकार करना अननुज्ञेय है ।

जब एम्स (अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान) के फैकल्टी एसोसिएशन द्वारा फाइल की गई 2002 की विशेष इजाजत याचिका (सिविल) सं. 2106 पर विचार करना आरंभ किया गया था तब दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा उसके संबंध में सूचना जारी की गई थी और यह अनुबद्ध किया गया था कि आदेश पारित किए जाने के पश्चात् आरक्षण नीति के अनुसार की गई कोई नियुक्ति अगले आदेशों तक अनंतिम होगी । जब अपील पर 2002 की सिविल अपील सं. 5119 के साथ तारीख 20 फरवरी, 2003 को सुनवाई आरंभ की गई तब उक्त मामलों में अवधारणार्थ अंतर्वलित मुद्दों के महत्वपूर्ण स्वरूप तथा इस समस्या के आवर्ती स्वरूप पर विचार करते हुए यह उचित समझा गया था कि मामलों की सुनवाई किसी बृहत्तर न्यायपीठ द्वारा की जाए । इसके पश्चात्, तारीख 12 फरवरी, 2004 को मुख्य न्यायमूर्ति की अध्यक्षता वाली तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ का यह मत था कि इन मामलों में संविधान के निर्वचन के बारे में विधि के सारवान् प्रश्न अंतर्वलित हैं और उनकी सुनवाई पांच न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा की जानी अपेक्षित है । इस निदेश के अनुसरण में मामला

अनेक बार पांच न्यायाधीशों की न्यायपीठ के समक्ष प्रस्तुत किया गया और अंततोगत्वा उन्हें तारीख 2 जुलाई, 2013 को पांच न्यायाधीशों की न्यायपीठ के समक्ष सूचीबद्ध किया गया था । यद्यपि यह मामला अब पांच न्यायाधीशों की न्यायपीठ के समक्ष है किन्तु निर्देश के निबंधन पूर्णतः स्पष्ट नहीं हैं । हमें अभिवचनों और उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ के निर्णय से यही पता चला है कि जिस प्रश्न पर विचार किया जाना है वह यह है कि क्या अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान (जिसे इसमें इसके पश्चात् "एम्स" कहा गया है) में स्पेशियल्टी और सुपर-स्पेशियल्टी संकाय पदों पर आरक्षण लागू नहीं होता है । उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने इस न्यायालय के कई विनिश्चयों को ध्यान में रखते हुए, जिनमें स्पेशियल्टी और सुपर-स्पेशियल्टी पाठ्यक्रमों में प्रवेश के लिए आरक्षण नामंजूर किया गया था, स्वयं को सीमित प्रश्न तक परिसीमित किया, अर्थात्, क्या सहायक आचार्य के प्रवेश स्तर के संकाय पद और सुपर-स्पेशियल्टी पदों पर नियुक्तियां करने के लिए आरक्षण नीति लागू नहीं होती है और यह कि क्या एम्स द्वारा तारीख 11 जनवरी, 1983 और 27 मई, 1984 को अंगीकृत संकल्प विखंडित किए जाने योग्य थे । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलों का तदनुसार निपटारा करते हुए,

अभिनिर्धारित – वर्तमान मामले में, डाक्टरेट प्रक्रम तक आरक्षण प्रदान किया जा रहा था किन्तु डाक्टरेट-पश्चात् वाले पाठ्यक्रमों और अनुसंधान के लिए भर्ती के आरंभिक प्रक्रम पर लिखित परीक्षा में बैठना होता था और जो अभ्यर्थी सफल होते थे उन्हें इसके पश्चात् अध्यापन की विभिन्न विधायों में भर्ती किया जाता था । समस्या उस प्रक्रम पर आरंभ होती है जब इसके पश्चात् विभिन्न पाठ्यक्रमों की बाबत पद आरक्षित किए जाते हैं । जब एक बार कोई अभ्यर्थी सहायक प्राचार्य के पद से आरंभ होने वाले संकाय के विभिन्न पदों पर भर्ती के लिए अर्हित हो जाता है तो इसके पश्चात् अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के समुदायों के अभ्यर्थियों के लिए पद आरक्षित करने का अब कोई तर्क नहीं था । सुपर-स्पेशियल्टी के उस स्तर तक आरक्षण का प्रश्न उद्भूत नहीं होना चाहिए था जैसा कि इंदिरा साहनी वाले मामले में नौ न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने मत व्यक्त किया था । सुपर-स्पेशियल्टी के स्तर पर कोई आरक्षण नहीं होना चाहिए और यह आरक्षण हर हालत में परिमाणनीय अंकड़ों पर आधारित होगा । वर्तमान मामले में आनुपातिक प्रतिनिधित्व न कि पर्याप्तता का, जैसा कि इंदिरा साहनी वाले मामले में या एम. नागराज

वाले मामले में समझा गया है, अवलंब लिया गया है । क्रीमी लेयर की संकल्पना के प्रति निर्देश करते समय इस बात पर जोर दिया गया कि "समता" का यह अर्थ नहीं है कि ऐसी समता बनाए रखने के लिए आरक्षण प्रत्येक मामले में लागू किया जाना था । (पैरा 7 और 13)

जबकि आरंभिक भर्ती के प्रक्रम पर योग्यता की संगतता और महत्व को अनदेखा नहीं किया जा सकता है किन्तु इस बात को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता है कि आरक्षण के उसी विचार को लागू करने से कम प्रतिभावान व्यक्ति का चयन विवक्षित होता है । इसके साथ-साथ यदि सामाजिक न्याय के सांविधानिक वचन को छोड़ा जाना है तो ऐसी कीमत चुकानी होगी । तथापि, अनुच्छेद 16 के उपबंधों के संबंध में एक विभेद किया गया था और अनुच्छेद 335 सुसंगत होगा और कोई भी न्यूनतम मानदंड विहित न करना अनुज्ञेय नहीं होगा । चिकित्सा अधिकारियों की नियुक्ति के मामले में सरकार या लोक सेवा आयोग यह कहने के हकदार नहीं होंगे कि अन्य व्यक्तियों के न्यूनतम अंक विहित करते समय अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के लिए न्यूनतम अर्हक अंक नहीं होंगे । ऐसी कतिपय सेवाएं और पद हैं जहां या तो उनसे सहबद्ध कर्तव्यों की प्रकृति के कारण या पदानुक्रम के उस स्तर के कारण जहां वे होते हैं, केवल योग्यता ही महत्वपूर्ण होती है । ऐसी स्थितियों में, आरक्षण के लिए उपबंध करने की सलाह नहीं दी जा सकती है । कतिपय पदों की बाबत कतिपय सेवाओं में विभिन्न तकनीकी पदों के संबंध में आरक्षण के नियम को लागू करना उपयुक्त नहीं हो सकता है जिनमें आयुर्विज्ञान, इंजीनियरी और अन्य वैज्ञानिक और तकनीकी पदों में सुपर-स्पेशियल्टी में के पद भी शामिल हैं । इससे भिन्न दृष्टिकोण नहीं अपनाया जा सकता है, यद्यपि यह सुझाव दिया गया है कि ऐसी मताभिव्यक्ति बाध्यकारी नहीं है क्योंकि यह एक इतरोक्ति प्रकृति की है । इस मत का समर्थन नहीं किया जा सकता है चूंकि आरक्षण की संकल्पना से ही सामान्य योग्यता विवक्षित होती है (पैरा 18 और 19)

यद्यपि इस मामले पर कुछ विस्तार से विचार-विमर्श किया गया है तथापि, सुपर-स्पेशियल्टी स्तर पर आरक्षण के संबंध में उठाए गए मुख्य मुद्दे पर इंदिरा साहनी वाले मामले में इस न्यायालय के नौ न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा पहले ही विचार किया गया है । इस विनिश्चय को ध्यान में रखते हुए, इस मुद्दे पर नौ न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा अभिव्यक्त मत से

भिन्न मत नहीं अपनाया जा सकता है । (पैरा 17)

अनुसृत निर्णय

		पैरा
[1999]	(1999) 7 एस. सी. सी. 120 : **डा. प्रीति श्रीवास्तव** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	11, 12, 17, 19
[1992]	(1992) सप्ली. 3 एस. सी. सी. 215 : **इंदिरा साहनी** बनाम **भारत संघ और अन्य** ;	2, 5, 7, 8, 12, 13, 15, 17, 18, 19
[1984]	[1984] 3 एस. सी. आर. 942 = (1984) 3 एस. सी. सी. 654 : **डा. प्रदीप जैन और अन्य** बनाम **भारत संघ और अन्य** ;	2, 10, 11, 16, 17, 19
[1981]	[1981] 1 उम. नि. प. 129 = [1980] 2 एस. सी. आर. 831 = (1980) 2 एस. सी. सी. 768 : **डा. जगदीश सरन और अन्य** बनाम **भारत संघ** ।	2, 9, 10, 11, 16, 17, 19

निर्दिष्ट निर्णय

[2006]	(2006) 8 एस. सी. सी. 212 : **एम. नागराज और अन्य** बनाम **भारत संघ और अन्य** ;	13, 16
[2005]	(2005) 1 एस. सी. सी. 394 : **ई. वी. चिन्नय्या** बनाम **आन्ध्र प्रदेश राज्य और अन्य** ;	13
[2003]	(2003) 11 एस. सी. सी. 146 : **सौरभ चौधरी और अन्य** बनाम **भारत संघ और अन्य** ;	12
[2002]	(2002) 8 एस. सी. सी. 481 : **टी. एम. ए. पई फाउंडेशन** बनाम **कर्नाटक राज्य** ;	12

[1988]	(1988) सप्ली. एस. सी. सी. 794 : **डा. फज़ल गफूर** बनाम **भारत संघ और अन्य** ;	10
[1981]	(1981) 4 एस. सी. सी. 296 : **मध्य प्रदेश राज्य** बनाम **निवेदिता जैन** ;	18
[1959]	[1959] सप्ली. 2 एस. सी. आर. 375 : **आय-कर आयुक्त, हैदराबाद-डक्कन** बनाम **वज़ीर सुल्तान एंड संस** ।	12

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2002 की सिविल अपील सं. 4500 तथा 5119.

1994 की सिविल रिट याचिका सं. 4223 में दिल्ली उच्च न्यायालय के तारीख 26 नवम्बर, 2011 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपीलें ।

उपस्थित होने वाले पक्षकारों की ओर से सर्वश्री मोहन पराशरण, महासालिसिटर, सिद्धार्थ लूथरा, अपर महासालिसिटर, पी. पी. राव, डा. राजीव धवन, मुकुल गुप्ता, ए. मरियापुथम, ज्येष्ठ अधिवक्ता, आर. के. गुप्ता, एस. के. गुप्ता, एम. के. सिंह, शेखर कुमार, ए. सुब्बा राव, डी. एल. चिदानंद, एन. मेय्यप्पन, (सुश्री) सुप्रिया जुनेजा, (सुश्री) अंजलि चौहान, ऋषभ कौशिक, (सुश्री) सुषमा सूरी, डा. एम. पी. राजू, (सुश्री) मैरी सारिया, जेम्स पी. थामस, (डा.) सत्य प्रकाश शर्मा, महमूद प्राचा, गौरव यादव, सुमित बब्बर और नरेश कुमार

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायमूर्ति अल्तमस कबीर ने दिया ।

मु. न्या. कबीर – जब एम्स (अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान) के फैकल्टी एसोसिएशन द्वारा फाइल की गई 2002 की विशेष इजाजत याचिका (सिविल) सं. 2106 पर विचार करना आरंभ किया गया था तब दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा उसके संबंध में सूचना जारी की गई थी और यह अनुबद्ध किया गया था कि आदेश पारित किए जाने के पश्चात् आरक्षण नीति के अनुसार की गई कोई नियुक्ति अगले आदेशों तक अनंतिम होगी ।

जब अपील पर 2002 की सिविल अपील सं. 5119 के साथ तारीख 20 फरवरी, 2003 को सुनवाई आरंभ की गई तब उक्त मामलों में अवधारणार्थ अंतर्वलित मुद्दों के महत्वपूर्ण स्वरूप तथा इस समस्या के आवर्ती स्वरूप पर विचार करते हुए यह उचित समझा गया था कि मामलों की सुनवाई किसी बृहत्तर न्यायपीठ द्वारा की जाए । इसके पश्चात्, तारीख 12 फरवरी, 2004 को मुख्य न्यायमूर्ति की अध्यक्षता वाली तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ का यह मत था कि इन मामलों में संविधान के निर्वचन के बारे में विधि के सारवान् प्रश्न अंतर्वलित हैं और उनकी सुनवाई पांच न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा की जानी अपेक्षित है । इस निदेश के अनुसरण में मामला अनेक बार पांच न्यायाधीशों की न्यायपीठ के समक्ष प्रस्तुत किया गया और अंततोगत्वा उन्हें तारीख 2 जुलाई, 2013 को पांच न्यायाधीशों की न्यायपीठ के समक्ष सूचीबद्ध किया गया था ।

2. यद्यपि यह मामला अब पांच न्यायाधीशों की न्यायपीठ के समक्ष है किन्तु निर्देश के निबंधन पूर्णतः स्पष्ट नहीं हैं । हमें अभिवचनों और उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ के निर्णय से यही पता चला है कि जिस प्रश्न पर विचार किया जाना है वह यह है कि क्या अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान (जिसे इसमें इसके पश्चात् "एम्स" कहा गया है) में स्पेशियल्टी और सुपर-स्पेशियल्टी संकाय पदों पर आरक्षण लागू नहीं होता है । उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने **इंदिरा साहनी** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1], **डा. जगदीश सरन और अन्य** बनाम **भारत संघ और अन्य**[2] तथा **डा. प्रदीप जैन और अन्य** बनाम **भारत संघ और अन्य**[3] वाले मामलों में इस न्यायालय के विनिश्चयों को ध्यान में रखते हुए, जिनमें स्पेशियल्टी और सुपर-स्पेशियल्टी पाठ्यक्रमों में प्रवेश के लिए आरक्षण नामंजूर किया गया था, स्वयं को सीमित प्रश्न तक परिसीमित किया, अर्थात्, क्या सहायक आचार्य के प्रवेश स्तर के संकाय पद और सुपर-स्पेशियल्टी पदों पर नियुक्तियां करने के लिए आरक्षण नीति लागू नहीं होती है और यह कि क्या एम्स द्वारा तारीख 11 जनवरी, 1983 और 27 मई, 1984 को अंगीकृत संकल्प विखंडित किए जाने योग्य थे ।

3. याची की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री

---

[1] (1992) सप्ली. 3 एस. सी. सी. 215

[2] [1981] 1 उम. नि. प. 129 = [1980] 2 एस. सी. आर. 831 = (1980) 2 एस. सी. सी. 768.

[3] [1984] 3 एस. सी. आर. 942 = (1984) 3 एस. सी. सी. 654.

पी. पी. राव ने सर्वप्रथम अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान अधिनियम, 1956 के उद्देश्यों और कारणों के कथन के प्रति निर्देश किया जिसमें निम्न प्रकार उपबंधित है : –

> "चिकित्सा व्यवसायियों में वृत्तिक सक्षमता को सुधारने के लिए, देश के सभी आयुर्विज्ञान महाविद्यालयों और दूसरी सहबद्ध संस्थाओं के समक्ष स्नातकोत्तर और स्नातकपूर्व दोनों स्तर की आयुर्विज्ञान शिक्षा का उच्च मानक रखना आवश्यक है । इसी प्रकार, आयुर्विज्ञान अनुसंधान के संवर्धन के लिए यह आवश्यक है कि देश स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान शिक्षा में स्व-पर्याप्तता प्राप्त करे । इन उद्देश्यों की प्राप्ति तब तक संभव नहीं है जब तक कि स्नातकपूर्व और स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान शिक्षा तथा अनुसंधान दोनों के लिए बहुत ही उच्च कोटि की सुविधाएं एक ही स्थान पर केन्द्रीय प्राधिकरण द्वारा उपलब्ध नहीं कराई जाती हैं । यह विधेयक नई दिल्ली में अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान के नाम से ज्ञात एक संस्था की स्थापना के द्वारा इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए है । यह संस्थान अपनी सभी शाखाओं में स्नातकपूर्व और स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान शिक्षा में शिक्षण के नमूनों का विकास इस प्रकार करेगा कि ये सभी आयुर्विज्ञान महाविद्यालयों और अन्य सहबद्ध संस्थाओं के लिए आयुर्विज्ञान शिक्षा का उच्च मानक प्रदर्शित करें और यह स्वास्थ्य संबंधी क्रियाकलापों को सभी महत्वपूर्ण शाखाओं के कार्मिकों के प्रशिक्षण के लिए और आयुर्विज्ञान अनुसंधान के विभिन्न पहलुओं के लिए भी उच्च कोटि की सुविधाएं प्रदान करेगा । संस्थान को आयुर्विज्ञान में डिग्रियां, डिप्लोमा और अन्य शैक्षणिक उपाधियां मंजूर करने की शक्ति होगी जो भारतीय आयुर्विज्ञान परिषद् अधिनियम, 1933 के प्रयोजन के लिए मान्यताप्राप्त आयुर्विज्ञान की डिग्रियां होंगी ।"

4. श्री राव ने अधिनियम की धारा 5 के प्रति भी निर्देश किया जिसमें इस संस्थान को राष्ट्रीय महत्व का संस्थान घोषित किया गया है । जैसा कि श्री राव द्वारा इंगित किया गया है, अधिनियम की धारा 13 उन उद्देश्यों के अनुरूप है जिनके लिए संस्थान का सृजन किया गया था और धारा 14 शिक्षण संस्थान के रूप में संस्थान के कृत्यों के शैक्षणिक पहलुओं से संबंधित संस्थान के कृत्यों के संबंध में है ।

5. श्री राव ने यह दलील दी कि इससे पूर्व **इंदिरा साहनी** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस प्रश्न की परीक्षा की गई थी और विचार किया गया था

जिसमें आरक्षण के प्रश्न पर विचार करते समय न्यायपीठ ने सेवाओं और पदों पर अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के दावों के संबंध में संविधान के अनुच्छेद 335 के उपबंधों पर भी विचार किया था । विद्वान् काउन्सेल ने न्यायमूर्ति जीवन रेड्डी के सम्मत निर्णय के प्रति निर्देश करते हुए विशेष रूप से पैरा 838 और 839 और उनमें की गई मताभिव्यक्तियों के प्रति निर्देश किया । चूंकि पैरा 838 नौ न्यायाधीशों की न्यायपीठ के मत पर केन्द्रित है इसलिए उसे इसमें इसके नीचे उद्धृत किया जाता है :–

> "838. जबकि अनुच्छेद 335 के संबंध में हमारी यह राय है कि कतिपय ऐसी सेवाएं और प्रास्थितियां हैं जिनमें या तो उनसे संसक्त कर्तव्यों की प्रकृति या उस स्तर (सोपानिकी में) के कारण जिस पर वे इन्हें अभिप्राप्त करते हैं, इसमें इसके ऊपर स्पष्टीकृत योग्यता का ही महत्व है । ऐसी स्थितियों में, आरक्षण का उपबंध करना उपयुक्त नहीं हो सकता है । उदाहरणार्थ, अनुसंधान और विकास संगठनों/विभागों/संस्थाओं में, आयुर्विज्ञान, इंजीनियरी में स्पेशियल्टी और सुपर-स्पेशियल्टी विषयों में और भौतिक विज्ञान और गणित में ऐसे अन्य पाठ्यक्रमों में, रक्षा सेवाओं और उससे संसक्त स्थापनों में के तकनीकी पद । इसी प्रकार, उच्चतर सोपानों, उदाहरणार्थ, प्रोफेसर (शिक्षा में), इंडियन एयरलाइन्स और एयर इंडिया में पायलट, नाभिकीय और अंतरिक्ष उपयोजन में वैज्ञानिक और तकनीशियन के पदों की दशा में आरक्षण के लिए उपबंध करना उपयुक्त नहीं होगा ।"

6. वास्तव में, पैरा 838 और पैरा 839 दोनों में उन क्षेत्रों को विनिर्दिष्ट करते हुए जिनमें आरक्षण लागू करना उपयुक्त नहीं हो सकता है, विद्वान् न्यायाधीश ने अनुसंधान और विकास संगठनों/विभागों/संस्थाओं में, आयुर्विज्ञान में स्पेशियल्टी और सुपर-स्पेशियल्टी विषयों में के पद शामिल किए हैं । ऐसी ही मताभिव्यक्ति पैरा 839 में दोहराई गई है जिसमें यह स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया गया था कि न्यायपीठ की यह राय थी कि कतिपय सेवाओं में और कतिपय पदों की बाबत आरक्षण का नियम लागू करना उपयुक्त नहीं हो सकेगा और पुनः चौथी मद के रूप में - आयुर्विज्ञान, इंजीनियरी और अन्य वैज्ञानिक और तकनीकी विषयों में सुपर-स्पेशियल्टी विषयों में के पद शामिल किए थे । श्री राव ने यह दलील दी कि जहां तक आयुर्विज्ञान का संबंध है, "सुपर-स्पेशियल्टी" से "डाक्टरेट-

पश्चात् के पाठ्यक्रम" अभिप्रेत हैं ।

7. श्री राव ने यह दलील दी कि वर्तमान मामले में, डाक्टरेट प्रक्रम तक आरक्षण प्रदान किया जा रहा था किन्तु डाक्टरेट-पश्चात् वाले पाठ्यक्रमों और अनुसंधान के लिए भर्ती के आरंभिक प्रक्रम पर लिखित परीक्षा में बैठना होता था और जो अभ्यर्थी सफल होते थे उन्हें इसके पश्चात् अध्यापन की विभिन्न विधायों में भर्ती किया जाता था । श्री राव ने यह दलील दी कि समस्या उस प्रक्रम पर आरंभ होती है जब इसके पश्चात् विभिन्न पाठ्यक्रमों की बाबत पद आरक्षित किए जाते हैं । श्री राव ने यह दलील दी कि जब एक बार कोई अभ्यर्थी सहायक प्राचार्य के पद से आरंभ होने वाले संकाय के विभिन्न पदों पर भर्ती के लिए अर्हित हो जाता है तो इसके पश्चात् अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के समुदायों के अभ्यर्थियों के लिए पद आरक्षित करने का अब कोई तर्क नहीं था । श्री राव ने यह दलील दी कि सुपर-स्पेशियल्टी के उस स्तर तक आरक्षण का प्रश्न उद्भूत नहीं होना चाहिए था जैसा कि **इंदिरा साहनी** (उपर्युक्त) वाले मामले में नौ न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने मत व्यक्त किया था ।

8. श्री राव ने यह दलील दी कि जबकि अनुच्छेद 16(4) राज्य को नियुक्तियों या पदों पर किसी पिछड़े वर्ग के नागरिकों के पक्ष में आरक्षण के लिए उपबंध करने के लिए सशक्त करता है किन्तु राज्य की राय में राज्य के अधीन सेवाओं में उसका पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व नहीं था और उसे **इंदिरा साहनी** (उपर्युक्त) वाले मामले में उपदर्शित रीति में पढ़ा और समझा जाना होगा । विद्वान् ज्येष्ठ काउन्सेल ने यह दलील दी कि यद्यपि **इंदिरा साहनी** (उपर्युक्त) वाले निर्णय के पैरा 838 और 839 में निश्चित निदेश नहीं दिए गए हैं तथापि, उसमें की गई मताभिव्यक्तियां सरकार और संस्थाओं, जैसा कि एम्स के लिए ऐसे दिशानिर्देश थे जिनका अनुसरण किया जाना है जिससे कि उत्कृष्ट अभ्यर्थियों को सुपर-स्पेशियल्टी विषयों में अध्ययन करने का अवसर उपलब्ध कराया जा सके जिसमें उच्चतर कुशलता की आवश्यकता होती है और जहां गुणता और विशेषज्ञता के संबंध में कोई समझौता न किया जा सके ।

9. श्री राव ने अपने उपर्युक्त निवेदनों के समर्थन में **डा. जगदीश सरन और अन्य** बनाम **भारत संघ** (उपर्युक्त) वाले मामले में तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ के विनिश्चय के प्रति भी निर्देश किया जिसमें पैरा 21, पैरा 22 और पैरा 23 में न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने निर्णय लिखते हुए आरक्षण

के संबंध में मत व्यक्त किए थे और जिसे उसने इस रूप में निर्दिष्ट किया है कि परीक्षित योग्यता के बड़े पैमाने पर निर्वासन को खोला जाए जिससे कि आशा है कि कुछ दलित प्रतिभाओं का चयन हो जाए, समानता की वेदी पर उत्कृष्टता का पूर्णतः त्याग - जब कि संविधान प्रत्येक के लिए विधि के समक्ष समता और विधि के समान संरक्षण का आदेश करता है - घातक, मूर्खतापूर्ण, शैक्षणिक तकनीक की स्वतः विफलता और राष्ट्र विरोधी है यदि इन सब बातों को राज्य की नीति का सामान्य नियम बना दिया जाता है । माननीय न्यायमूर्ति ने आगे यह मत व्यक्त किया कि उचित अधिमानता, युक्तियुक्त आरक्षण, पूर्विक आवश्यकताओं का न्यायसंगत समायोजन, प्रतिस्पर्धी योग्यता की आंशिक मान्यता के साथ-साथ कमजोरों की वास्तविक संभावना ही सामाजिक न्याय की गतिशीलता है जो संविधान के तीनों अनुच्छेदों को बराबर सजीव बनाती है । विद्वान् न्यायाधीश ने पैरा 23 में आगे यह मत व्यक्त किया कि समतावाद की उसी धारा से निकलने वाली एक अन्य परिसीमा है । किसी क्षेत्र की मूलभूत चिकित्सा आवश्यकताओं या अक्षम समूह के लिए न्यायोचित ठहराई गई अधिमानता विशेषज्ञता के उच्चतम मानदंडों में उसी परिमाप में अभिभावी नहीं हो सकती जहां श्रेष्ठ, कुशल या प्रतिभावान व्यक्तियों का चयन उनकी सक्षमता के अनुसार किया जाना चाहिए । विद्वान् न्यायाधीश ने भारतीय चिकित्सा परिषद् की उन सिफारिशों को निर्बंधित किया जिनमें यह उपदर्शित था कि स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों के विद्यार्थियों का चयन पूर्णतः योग्यता के आधार पर किया जाना चाहिए और इसका निर्णय स्नातकपूर्व पाठ्यक्रम में शैक्षणिक अभिलेख के आधार पर किया जाना चाहिए ।

10. श्री राव ने जिस अगले प्रश्न के प्रति निर्देश किया वह **डा. फज़ल गफूर** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] वाले मामले में दिया गया एक संक्षिप्त निर्णय है जो कि दो न्यायाधीशों द्वारा दिया गया एक विनिश्चय था, जिसमें **डा. प्रदीप जैन और अन्य** बनाम **भारत संघ और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लिया गया था जिसमें इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने संविधान की प्रस्तावना में अंतर्विष्ट भारत के नागरिकों की महत्वाकांक्षाओं के प्रकाश में आरक्षण के प्रश्न पर विचार करते समय यह मत व्यक्त किया था कि जबकि स्नातकपूर्व पाठ्यक्रम के संबंध में आरक्षण स्वीकार्य है किन्तु जब स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों, जैसे एम. डी., एम. एस. और इसी प्रकार के पाठ्यक्रमों में

---

[1] (1988) सप्ली. एस. सी. सी. 794.

प्रवेश के लिए राज्य के भीतर निवास की अपेक्षा या संस्थागत अधिमानता पर आधारित आरक्षण का प्रश्न उत्पन्न होता है तो इससे भिन्न विचारणाएं अभिभावी होंगी । माननीय न्यायालय ने **डा. जगदीश सरन** (उपर्युक्त) वाले मामले में किए गए विनिश्चय का अनुसरण करते हुए यह मत व्यक्त किया कि हम उत्कृष्टता के संबंध में किसी अन्य विचारणा के साथ समझौता नहीं करने दे सकते क्योंकि ऐसा करना राष्ट्र के हित के लिए हानिकर होगा । माननीय न्यायालय ने यह भी मत व्यक्त किया कि देश के प्रत्येक अन्य व्यक्ति के लिए अवसर की समानता कानूनी गारंटी है तो सर्वोत्तम का चयन करने के लिए योग्यता कसौटी होनी चाहिए ।

11. श्री राव ने अंत में **डा. प्रीति श्रीवास्तव** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय की संविधान पीठ के विनिश्चय के प्रति निर्देश किया जो कि एक ऐसी रिट याचिका थी जिसकी सुनवाई आरक्षण के विभिन्न पहलुओं के संबंध में अनेक अन्य रिट याचिकाओं के साथ की गई थी । श्री राव ने यह इंगित किया कि संविधान पीठ ने उसमें अभिव्यक्त मतों के साथ अपनी सहमति व्यक्त करते हुए इसमें इसके पूर्व निर्दिष्ट **डा. प्रदीप जैन** (उपर्युक्त) और **डा. जगदीश सरन** (उपर्युक्त) वाले मामले के प्रति भी निर्देश किया । निर्णय के पैरा 25 में न्यायमूर्ति सुजाता वी. मनोहर ने संविधान पीठ की ओर से निर्णय सुनाते हुए यह मत व्यक्त किया कि आयुर्विज्ञान में स्पेशियल्टी और सुपर-स्पेशियल्टी पाठ्यक्रमों में संबद्ध शिक्षण अस्पतालों में रोगियों का अपने हाथों से उपचार करने या आपरेशन करने का अनुभव होना भी आवश्यक होता है । इन कार्यक्रमों में शिक्षण प्राप्त करने वाले व्यक्तियों से शिक्षण अस्पतालों में पद धारित करने या ऐसे पदों से संबद्ध कर्तव्यों का निर्वहन करने की प्रत्याशा की जाती है । अतः, अनुच्छेद 335 के तत्व इन पाठ्यक्रमों के लिए अभ्यर्थियों के चयन और इस प्रयोजनार्थ विरचित नियमों को रंजित करते हैं । परिणामस्वरूप, पैरा 26 में यह भी मत व्यक्त किया गया था कि संक्षेप में अनुसूचित जातियों/ अनुसूचित जनजातियों के अभ्यर्थियों के लिए विशेषज्ञता स्तर पर विशेष उपबंध - चाहे वे आरक्षण या निम्नतर अर्हक अंक के संबंध में हों - न्यूनतम होने चाहिएं । तथापि, सुपर-स्पेशियल्टीज़ के स्तर पर ऐसा कोई विशेष उपबंध नहीं हो सकता है । संविधान पीठ ने अपने निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए अंततः यह अभिनिर्धारित किया कि चूंकि चिकित्सा संस्थाओं में उच्चतम स्तरों पर कोई आरक्षण अनुज्ञेय नहीं है इसलिए याचियों का

---

[1] (1999) 7 एस. सी. सी. 120.

कहना सही था जब उन्होंने यह दलील दी कि डी. एम. और एम. सी. एच. पाठ्यक्रमों में प्रवेश के लिए, जो कि सुपर-स्पेशियल्टी पाठ्यक्रम हैं, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए किया गया आरक्षण अनुच्छेद 15(4) और 16(4) के अधीन दी गई सांविधानिक आज्ञा से संगत नहीं हैं और यह कि स्नातकोत्तर चिकित्सा शिक्षा और अनुसंधान संस्थान, चंडीगढ़ विनियम, 1967 का विनियम 27 डी. एम. और एम. सी. एच. पाठ्यक्रमों में प्रवेश के स्तरों पर लागू नहीं होगा ।

12. श्री राव ने यह दलील दी कि स्वास्थ्य सर्वेक्षण और विकास समिति ने, जो कि लोकप्रिय रूप से भूरे समिति के रूप में जानी जाती है, वर्ष 1946 में प्रकाशित अपनी रिपोर्ट में दिल्ली में एक राष्ट्रीय आयुर्विज्ञान केन्द्र स्थापित करने की सिफारिश की थी जो सुर्हित अध्यापकों और अनुसंधान कामकाजियों को प्रशिक्षण देने में अपना ध्यान केन्द्रित करेगी जिससे कि संपूर्ण देश में द्रुत गति से बढ़ने वाले स्वास्थ्य क्रियाकलापों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उनकी एक स्थिर धारा बनाई जा सके । ऐसा प्रतीत होता है कि उक्त रिपोर्ट के अनुसरण में और स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् संघ के स्वास्थ्य मंत्रालय ने उपर्युक्त विचार को कार्यान्वित करने की कार्यवाही आरंभ की जिसके परिणामस्वरूप अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान अधिनियम, 1956 अधिनियमित किया गया और अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान को राष्ट्रीय महत्व का एक स्वशासी संस्थान बनाया गया और उसके उद्देश्यों और कृत्यों को परिभाषित किया गया । श्री राव द्वारा इस बात पर जोर देने के लिए कि **इंदिरा साहनी** (उपर्युक्त) वाले मामले तथा **प्रीति श्रीवास्तव** (उपर्युक्त) वाले मामले में की गई मताभिव्यक्तियां बाध्यकारी नहीं थीं हालांकि वे निर्णयों में की गई मताभिव्यक्तियों की प्रकृति की थीं, विभिन्न अन्य विनिश्चयों के प्रति भी निर्देश किया गया था जिनमें **सौरभ चौधरी और अन्य** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] तथा **टी. एम. ए. पई फाउंडेशन** बनाम **कर्नाटक राज्य**[2] वाले विनिश्चय भी शामिल थे । श्री राव ने **आय-कर आयुक्त, हैदराबाद-डक्कन** बनाम **वज़ीर सुल्तान एंड संस**[3] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय के प्रति निर्देश किया जिसमें तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने "इतरोक्ति" के सिद्धांत की परीक्षा की थी और यह निष्कर्ष निकाला था कि कई बार

---

[1] (2003) 11 एस. सी. सी. 146.

[2] (2002) 8 एस. सी. सी. 481.

[3] [1959] सप्ली. 2 एस. सी. आर. 375.

इतरोक्ति में भी संविधान के अनुच्छेद 141 के अधीन उच्चतम न्यायालय द्वारा घोषित विधि का बल होता है । श्री राव ने इस टिप्पणी के साथ अपनी बात समाप्त की कि स्पेशियल्टी और सुपर-स्पेशियल्टी विषयों में या एम्स के संकाय में नियुक्ति के लिए आरक्षण की संकल्पना आरंभ करने से वह प्रयोजन ही विफल हो जाएगा जिसके लिए संस्थान स्थापित किया गया था । श्री राव ने यह भी दलील दी कि यदि सुपर-स्पेशियल्टी विषयों के स्तर पर उत्कृष्टता प्राप्त की जानी है तो ऐसी शिक्षा प्रदान करने में या ऐसे व्यक्तियों की भर्ती करने में जो ऐसे स्तर पर ऐसी शिक्षा प्रदान करेंगे, कोई समझौता नहीं किया जा सकता था ।

13. विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता डा. राजीव धवन ने, जो 2002 की सिविल अपील सं. 5119 में उपस्थित हुए थे, यह दलील दी कि एम्स अधिनियम शासी निकाय को किसी भी प्रक्रम पर, कम से कम सुपर-स्पेशियल्टी के प्रक्रम पर आरक्षण अधिरोपित करने के लिए सशक्त नहीं करता था । डा. धवन ने एम्स के निदेशक द्वारा फाइल किए गए शपथपत्र के प्रति निर्देश करते हुए यह दलील दी कि उच्च न्यायालय का विनिश्चय **इंदिरा साहनी** (उपर्युक्त) वाले मामले तथा **एम. नागराज और अन्य** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय के प्रतिकूल था जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था किया कि सुपर-स्पेशियल्टी के स्तर पर कोई आरक्षण नहीं होना चाहिए और यह आरक्षण हर हालत में परिमाणनीय आंकड़ों पर आधारित होगा । श्री राव ने यह दलील दी कि उक्त दो मामलों के बावजूद वर्तमान मामले में आनुपातिक प्रतिनिधित्व न कि पर्याप्तता का, जैसा कि **इंदिरा साहनी** (उपर्युक्त) वाले मामले में या **एम. नागराज** (उपर्युक्त) वाले मामले में समझा गया है, अवलंब लिया गया है । डा. धवन ने क्रीमी लेयर की संकल्पना के प्रति निर्देश करते समय इस बात पर जोर दिया कि "समता" का यह अर्थ नहीं है कि ऐसी समता बनाए रखने के लिए आरक्षण प्रत्येक मामले में लागू किया जाना था, उदाहरणार्थ, क्रीमी लेयर की वह संकल्पना जिस पर इस न्यायालय द्वारा **ई. वी. चिन्नय्या** बनाम **आन्ध्र प्रदेश राज्य और अन्य**[2] वाले मामले में विचार किया गया था ।

14. संस्थान की ओर से उपस्थित होते हुए विद्वान् अधिवक्ता श्री महमूद प्राचा ने यह दलील दी कि प्रायः पिछड़े वर्गों और अनुसूचित जातियों

---

[1] (2006) 8 एस. सी. सी. 212.

[2] (2005) 1 एस. सी. सी. 394.

और अनुसूचित जनजातियों के लोगों के साथ भेदभाव बरता जाता था और उत्कृष्ट योग्यता रखने के बावजूद विभिन्न चिकित्सा महाविद्यालयों और विशेषकर अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान द्वारा, जो कि राष्ट्रीय महत्व का एक संस्थान है, अपेक्षित मानकों पर खरा उतरने के लिए पर्याप्त अवसर प्रदान नहीं किए गए थे । श्री प्राचा ने इस बात पर जोर दिया कि यद्यपि संस्थान के सभी विभिन्न स्तरों पर आरक्षण लागू किया गया था तथापि, काफी समय से यह दर्शित करने के लिए कोई आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं कि एम्स में प्रदान की जा रही चिकित्सा सेवाओं की गुणवत्ता में कोई कमी आई है । दूसरी ओर, एम्स न केवल प्रोन्नति और अनुसंधान कार्य के लिए बल्कि चिकित्सा शिक्षा के प्रयोजन के लिए भी सबसे अधिक पसन्द किया जाने वाला चिकित्सा संस्थान है । श्री प्राचा ने हिन्दू पुराण से एक उदाहरण लेते हुए महाभारत में एकलव्य और अर्जुन की कथा से सादृश्यता दिखाई । जबकि अर्जुन का संबंध शाही वर्ग से था किन्तु एकलव्य एक जनजाति का लड़का था जिसने किसी गुरु से वास्तविक प्रशिक्षण और मार्गदर्शन प्राप्त किए बिना अपने ही प्रयासों से धनुर्विद्या में उत्कृष्टता प्राप्त की थी । प्रसिद्ध द्रोणाचार्य धनुर्विद्या में अर्जुन का गुरु था और एकलव्य के पास जो कौशल था वह उसने द्रोणाचार्य द्वारा अर्जुन को शिक्षा देते हुए देखने मात्र से प्राप्त किया था । तथापि, जब धनुर्विद्या में प्रतियोगिता हुई तब द्रोणाचार्य ने, जिसे लगभग पक्का विश्वास था कि यदि एकलव्य को अवसर दिया गया तो वह संभवतः अर्जुन को हरा देगा, एकलव्य से कहा कि यदि वह वास्तव में उसका सम्मान करता है तो उसे अपने गुरु को अपना दाहिना अंगूठा गुरुदक्षिणा के रूप में देना चाहिए । एकलव्य ने कर्तव्यनिष्ठा से उस व्यक्ति की आज्ञा का पालन किया जिसे उसने अपने गुरु के रूप में माना था और इस प्रकार उसे उस प्रतियोगिता में प्रतिस्पर्धा करने से निवारित किया गया था, जिसमें अर्जुन विजयी हुआ । श्री प्राचा ने यह दलील दी कि मात्र इस कारण कि एकलव्य एक जनजातीय लड़का था, उसे उसकी प्रतिभा और उत्कृष्टता के बावजूद अर्जुन से प्रतिस्पर्धा करने का अवसर देने से वंचित किया गया था । श्री प्राचा ने यह दलील दी कि आज के समाज में ऐसे अनेक एकलव्य हैं जिनका यदि दमन नहीं किया गया और एक अवसर दिया गया तो संभवतः वे समाज के उच्चतर वर्गों के प्रतियोगियों को मात दे देंगे ।

15. श्री प्राचा ने सभी प्रक्रमों पर आरक्षण की संकल्पना का बलपूर्वक समर्थन किया, जिसमें सुपर-स्पेशियल्टी प्रक्रम भी है । उसने इस बात पर जोर दिया कि ऐसे फैकल्टी पदों पर भर्ती के लिए प्रवेश स्तर पर, जिन

सभी को स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम के पश्चात् सुपर-स्पेशियल्टी विधाओं के रूप में माना जाता है, पिछड़े वर्गों के सदस्य को आरक्षण के लिए कोई पृथक् महत्व दिए बिना अन्य अभ्यर्थियों के साथ एक परीक्षा में बैठना होता था । अन्य अभ्यर्थियों के साथ लिखित परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् ही पिछड़े वर्गों के किसी सदस्य को आरक्षण के आधार पर अध्यापन पद पर नियुक्त किया जाता था । श्री प्राचा ने यह दलील दी कि ऐसे अभ्यर्थी को उसके अन्य सहयोगी फैकल्टी सदस्यों के स्तर तक पहुंचने का अवसर प्रदान करने के आशय से ही ऐसा किया गया था । श्री प्राचा ने यह दलील दी कि इस छोटी सी सहायता देने का आशय पिछड़े समुदायों के लोगों को शिक्षण के क्षेत्र में अपनी उपस्थिति दर्ज कराने में सहायता करना था जिससे कि समरूप स्थिति वाले अन्य व्यक्तियों को प्रोत्साहित किया जा सके । श्री प्राचा ने **इंदिरा साहनी** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का अपनी इस दलील के समर्थन में भी अवलंब लिया कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के सदस्यों को पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व नहीं दिया गया था और उक्त प्रयोजन के लिए कतिपय मात्रा में आरक्षण आवश्यक था जिससे कि वे अन्य व्यक्तियों के साथ प्रतिस्पर्धा कर सकें और शिक्षा के क्षेत्र में उत्कृष्टता प्राप्त कर सकें । श्री प्राचा ने संस्थान द्वारा अपनाई गई नीति का बलपूर्वक समर्थन करते हुए यह दलील दी कि एम्स की फैकल्टी आफ एसोसिएशन द्वारा फाइल की गई अपील खारिज की जानी चाहिए ।

16. भारत संघ की ओर से उपस्थित होते हुए विद्वान् महासालिसिटर ने श्री प्राचा द्वारा दी गई दलीलों को दोहराया और यह जोड़ा कि राज्य का यह सांविधानिक कर्तव्य है कि समाज के ऐसे कतिपय वर्गों को सशक्त किया जाए जिन्हें उनकी विशिष्ट स्थितियों से ऊपर उठाने के लिए सहायता की आवश्यकता है । विद्वान् महासालिसिटर ने यह दलील दी कि यद्यपि संविधान का अनुच्छेद 46 एक निदेशक तत्व है तथापि, वह तत्कालीन सरकार के लिए सुशासन के एक दिशानिर्देश के स्वरूप का है । उक्त अनुच्छेद का आशय ऐसे दलित वर्गों की सहायता करना था जिनके पास अन्यथा अपने स्तर को बढ़ाने का बहुत कम अवसर था । विद्वान् महासालिसिटर ने इस प्रश्न पर विचार करते हुए कि केन्द्रीय सरकार ने आरंभ में कब शिक्षा में उत्कृष्टता के आधार पर आरक्षण के सिद्धांत का विरोध किया था और वर्ष 1972 में एक पृथक् आधार अपनाना क्यों आवश्यक हो गया था और सुपर-स्पेशियल्टी पाठ्यक्रमों में भी आरक्षण का

समर्थन किया था, इस बात पर जोर दिया कि यह नीति पर्याप्तता के प्रश्न पर आधारित नहीं थी बल्कि पिछड़े वर्गों के सशक्तीकरण के अध्युपाय के रूप में थी । **एम. नागराज** (उपर्युक्त) वाले विनिश्चय के प्रति निर्देश करते समय, जिसके प्रति अन्य विद्वान् काउन्सेलों द्वारा निर्देश किया गया है । विद्वान् महासालिसिटर ने यह दलील दी कि संविधान में अनुच्छेद 16(4क) के पुरःस्थापन से **एम. नागराज** (उपर्युक्त) वाले मामले में निकाले गए निष्कर्ष को पृथक् रूप से पढ़ना होगा । तथापि, उसने इस बात पर भी जोर दिया कि आरक्षण अधिरोपित करने के संबंध में कोई सांविधानिक प्रतिषेध नहीं है यदि उसे ऐसे पिछड़े वर्गों के फायदे के लिए आवश्यक समझा जाता है जिनके पास अपना भाग्य संवारने में सहायता करने के लिए बहुत कम या बिल्कुल भी समर्थन नहीं है । विद्वान् महासालिसिटर ने **डा. जगदीश सरन** (उपर्युक्त) वाले मामले और **डा. प्रदीप जैन** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चयों के प्रति निर्देश करते हुए जिनका इसमें इसके ऊपर उल्लेख किया गया है, इस बात पर जोर दिया कि **डा. प्रदीप जैन** (उपर्युक्त) वाले मामले में यह निदेश देते समय कि आरक्षण 70 प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिए, संविधान के अनुच्छेद 16(4क) को विचार में नहीं लिया गया था ।

17. यद्यपि इस मामले पर कुछ विस्तार से विचार-विमर्श किया गया है तथापि, सुपर-स्पेशियल्टी स्तर पर आरक्षण के संबंध में उठाए गए मुख्य मुद्दे पर **इंदिरा साहनी** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के नौ न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा पहले ही विचार किया गया है । इस विनिश्चय को ध्यान में रखते हुए, हम इस मुद्दे पर नौ न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा अभिव्यक्त मत से भिन्न मत अपनाना नहीं चाहते हैं । **डा. जगदीश सरन** (उपर्युक्त) और **डा. प्रदीप जैन** (उपर्युक्त) वाले मामलों में इस न्यायालय द्वारा दिए गए विनिश्चयों के अलावा यह मुद्दा **प्रीति श्रीवास्तव** (उपर्युक्त) वाले मामले में भी विचारार्थ उद्भूत हुआ था जिसका विनिश्चय भी पांच न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा किया गया था । जबकि **डा. जगदीश सरन** (उपर्युक्त) वाले मामले और **डा. प्रदीप जैन** (उपर्युक्त) वाले मामले में यह स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया गया था कि सुपर-स्पेशियल्टी स्तर पर योग्यता के संबंध में कोई समझौता नहीं हो सकता था **प्रीति श्रीवास्तव** (उपर्युक्त) वाले मामले में भी यही भावनाएं व्यक्त की गई थीं । **प्रीति श्रीवास्तव** (उपर्युक्त) वाले मामले में संविधान पीठ को स्नातकोत्तर चिकित्सा शिक्षा और अनुसंधान संस्थान, चंडीगढ़ विनियम, 1967 के विनियम 27 पर विचार करने का अवसर मिला जिसमें संस्थान में

प्रत्येक पाठ्यक्रम में 20 प्रतिशत स्थान समय-समय पर प्रख्यापित केन्द्रीय सरकार के साधारण नियमों के अनुसार अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों या अन्य प्रवर्गों के व्यक्तियों के लिए आरक्षित रखे जाने थे । संविधान पीठ ने यह निष्कर्ष निकाला कि विनियम 27 सुपर-स्पेशियल्टी के उच्चतर स्तर पर लागू नहीं किया जा सकता था क्योंकि इससे ऐसे चयनित प्रतिभावान अभ्यर्थियों को, जो चिकित्सा अनुसंधान और उसके उपयोजन के क्षेत्र में ज्ञान के संवर्धन में योगदान कर सकते थे, सर्वोत्तम संभावित प्रशिक्षण प्रदान करने का उद्देश्य ही विफल हो जाएगा । माननीय न्यायालय ने अंततः यह अभिनिर्धारित किया कि सुपर-स्पेशियल्टी स्तर पर किसी प्रकार की शिथिलता प्रदान नहीं की जा सकती है ।

18. **इंदिरा साहनी** (उपर्युक्त) वाले निर्णय के पैरा 836 में यह मत व्यक्त किया गया था कि जबकि आरंभिक भर्ती के प्रक्रम पर योग्यता की संगतता और महत्व को अनदेखा नहीं किया जा सकता है किन्तु इस बात को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता है कि आरक्षण के उसी विचार को लागू करने से कम प्रतिभावान व्यक्ति का चयन विवक्षित होता है । यह भी मत व्यक्त किया गया था कि इसके साथ-साथ यदि सामाजिक न्याय के सांविधानिक वचन को छोड़ा जाना है तो ऐसी कीमत चुकानी होगी । तथापि, ऐसे सुझाव देने के पश्चात् अगले ही पैरा में संविधान के अनुच्छेद 15 के प्रकाश में एक चेतावनी दी गई थी । तथापि, अनुच्छेद 16 के उपबंधों के संबंध में एक विभेद किया गया था और यह अभिनिर्धारित किया गया था कि अनुच्छेद 335 सुसंगत होगा और कोई भी न्यूनतम मानदंड विहित न करना अनुज्ञेय नहीं होगा । निस्संदेह, उक्त मताभिव्यक्ति चिकित्सा महाविद्यालयों में प्रवेश के संदर्भ में की गई थी और **मध्य प्रदेश राज्य** बनाम **निवेदिता जैन**[1] वाले मामले में के विनिश्चय के प्रति भी निर्देश किया गया था जहां चिकित्सा पाठ्यक्रमों में प्रवेश किसी प्रवेश परीक्षा द्वारा विनियमित होता था । यह अभिनिर्धारित किया गया था कि चिकित्सा अधिकारियों की नियुक्ति के मामले में सरकार या लोक सेवा आयोग यह कहने के हकदार नहीं होंगे कि अन्य व्यक्तियों के न्यूनतम अंक विहित करते समय अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के लिए न्यूनतम अर्हक अंक नहीं होंगे । नौ न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने अगले ही पैरा में

---

[1] (1981) 4 एस. सी. सी. 296.

अनुच्छेद 335 के उपबंधों पर विचार-विमर्श करते हुए यह भी मत व्यक्त किया कि ऐसी कतिपय सेवाएं और पद हैं जहां या तो उनसे सहबद्ध कर्तव्यों की प्रकृति के कारण या पदानुक्रम के उस स्तर के कारण जहां वे होते हैं, केवल योग्यता ही महत्वपूर्ण होती है । ऐसी स्थितियों में, आरक्षण के लिए उपबंध करने की सलाह नहीं दी जा सकती है । अगले पैरा में, यह स्थिति और भी स्पष्ट कर दी गई थी जब माननीय न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि उसकी यह राय है कि कतिपय पदों की बाबत कतिपय सेवाओं में विभिन्न तकनीकी पदों के संबंध में आरक्षण के नियम को लागू करना उपयुक्त नहीं हो सकता है जिनमें आयुर्विज्ञान, इंजीनियरी और अन्य वैज्ञानिक और तकनीकी पदों में सुपर-स्पेशियल्टी में के पद भी शामिल हैं ।

19. हम इससे भिन्न दृष्टिकोण नहीं अपना सकते हैं, यद्यपि यह सुझाव दिया गया है कि ऐसी मताभिव्यक्ति बाध्यकारी नहीं है क्योंकि यह एक इतरोक्ति प्रकृति की है । हम इस मत का समर्थन नहीं कर सकते हैं चूंकि आरक्षण की संकल्पना से ही सामान्य योग्यता विवक्षित होती है और हमें **इंदिरा साहनी** (उपर्युक्त) वाले मामले में उपदर्शित चेतावनी को ध्यान में रखना होगा । हम **इंदिरा साहनी** (उपर्युक्त) वाले मामले में नौ न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा अभिव्यक्त मतों को दोहराते हुए उक्त मतों के प्रकाश में दोनों सिविल अपीलों का निपटारा करते हैं जो कि **डा. जगदीश सरन** (उपर्युक्त), **डा. प्रदीप जैन** (उपर्युक्त) और **डा. प्रीति श्रीवास्तव** (उपर्युक्त) वाले मामलों में भी व्यक्त किए गए थे । हम केन्द्रीय सरकार और राज्य सरकारों को **इंदिरा साहनी** (उपर्युक्त) वाले मामले और इस मामले में तथा ऊपर निर्दिष्ट अन्य विनिश्चयों में भी अभिव्यक्त मतों के अनुसार संविधान के अनुच्छेद 335 के उपबंधों को ध्यान में रखते हुए समुचित कदम उठाने पर जोर देते हैं ।

20. खर्चे के संबंध में कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

अपीलों का तदनुसार निपटारा किया गया ।

ग्रो.

———